**ओ३म्**

**‘शिवरात्रि को ऋषि दयानन्द को हुए बोध से देश व विश्व का अपूर्व कल्याण हुआ’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

वेदों के अपूर्व ऋषि और आर्यसमाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द सरस्वती को मंगलवार 12 फरवरी, सन् 1839 को शिवरात्रि के दिन बोध हुआ था। क्या बोध हुआ था, यह कि उनके पिता व परिवार जन जिस शिव मूर्ति के रूप में शिव लिंग की पूजा करते थे वह सच्चा व यथार्थ ईश्वर नहीं है। शिव पुराण ग्रन्थ में वर्णित भगवान शिव की जिस कथा को शिवरात्रि के दिन व्रत करते हुए सुना व सुनाया जाता है, वह कथा भी मन्दिर वाले शिवलिंग पर यथार्थ रूप में घटित नहीं होती। शिवरात्रि के दिन हम जिस कथा का वाचन करते हैं व सुनते हैं वह कथा कुछ ऐतिहासिक और कुछ पारमार्थिक होती है। कथा में भगवान शिव के जिन गुणों का वर्णन किया जाता है वह शिव मूर्ति वा शिवलिंग में किंचित भी नहीं पाये जाते। यदि यह कथा व शिव लिंग की मूर्ति सत्य होते तो फिर शिवरात्रि के दिन 14 वर्षीय बालक मूल शंकर को मन्दिर के चूहों को शिव मूर्ति के अंगों पर अबाध रूप से उछल कूद करते देख कर उसकी पराम्परागत उपासना से निवृत्ति, विरक्ति व अनासक्ति न हुई होती। उन्होंने देखा कि देर रात्रि के समय मन्दिर में विद्यमान बिलों से चूहे निकलते हैं ओर शिव लिंग के चारों ओर दौड़ रहे हैं। शिव भक्तों व व्रतियों ने वहां जो मिष्ठान्नरूपी नैवैद्य चढ़ाये थे, उसका स्वतन्त्रतापूर्वक भक्षण कर रहे हैं। जीवित मनुष्य के शरीर पर यदि मक्खी भी बैठ जाये तो वह उसे उड़ा देता है मच्छर बैठे तो उसे हटाता व मार देता है। मक्खी व मच्छर भी तुच्छ जीव होकर मनुष्य से डरते हैं परन्तु चूहें शिवजी से पूरी तरह से निर्भय होकर उसके शरीर पर उछल कूद किये ही जा रहे थे। शिवमूर्ति का यह जड़वत् व्यवहार देखकर बालक मूलशंकर को यह निश्चय हो गया कि उनके सम्मुख जो शिवमूर्ति है वह शक्ति, बुद्धि व ज्ञान से सर्वथा रहित है। उन्होंने उसी दिन अपने पिता से जो कथा सुनी थी उसके अनुसार शिव कैलाश पर्वत पर निवास करते हैं जो सर्वशक्तिमान है और विश्व के बड़े से बड़े बलशाली व्यक्ति को संकल्प व संकेत मात्र से धराशायी कर सकते थे। शिवलिंग की मूर्ति में वह शक्ति दृष्टिगोचर वा विद्यमान न होने अथवा चूहों को अपने शिर आदि अंगों से दूर न रख पाने के कारण बालक मूल शंकर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि यह असली शिव नहीं है, अतः उन्होंने न केवल अपने व्रत का ही त्याग कर दिया था अपितु भविष्य में शिवलिंग वा शिवमूर्ति की पूजा-अर्चना न करने का संकल्प भी कर लिया था। यही ऋषि दयानन्द को शिवरात्रि के उस दिन बोध हुआ था। इसके बाद वह सच्चे शिव की खोज में जुट गये जिसे उन्होंने भारी तप व पुरुषार्थ करके प्राप्त कर ही लिया। यही ऋषि के बोध का फल था जिससे न केवल भारत अपितु सारा विश्व लाभान्वित हुआ। यह बात और है सारा संसार अविद्या से ग्रस्त है। संसार के लोगों ने अपनी अविद्या व किन्हीं स्वार्थों के कारण ऋषि दयानन्द के द्वारा अन्वेषित सच्चे शिव के सत्य स्वरूप विषयक ज्ञान की उपेक्षा की और आज भी संसार अविद्या से ग्रस्त होकर मत-मतान्तरों के अन्धविश्वासों को मानने में ही अग्रसर है।

ऋषि दयानन्द को शिवरात्रि के दिन जो बोध हुआ उसका परिणाम यह हुआ कि उन्हें संसार के प्रति वैराग्य हो गया और वह सच्चे ईश्वर को जानने के लिए एक अपूर्व सच्चे जिज्ञासु बन गये। शिवरात्रि पर बोध होने के समय उनकी आयु मात्र 14 वर्ष थी, इसलिये उन्होंने स्वयं को अध्ययन में व्यस्त किया और यजुर्वेद को स्मरण करने के साथ अनेक व्याकरण व शास्त्रीय ग्रन्थ पढते रहे। यदा-कदा वह अपने गुरुजन और मित्रों से भी ईश्वर के विषय में शंकायें करते रहते थे। ऋषि दयानन्द के वैराग्य विषयक विचार माता-पिता से छिप नहीं सके, अतः उनके द्वारा उनके विवाह की तैयारी की गई। जब बाल मूलशंकर को लगा कि वह विवाह से बच नहीं सकते तो गृहस्थ में न फंसने का निश्चय कर 18 वर्ष की आयु में उन्होंने पितृ गृह का त्याग कर दिया। ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रथम उन्होंने देश भर के धार्मिक स्थानों में जाकर योगियों व धर्म गुरुओं से सम्पर्क कर उनसे ईश्वर व धर्म विषयक ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न किया। एक सच्चा व सिद्ध योगी बनने और सद्ज्ञान की प्राप्त करने के लिए उन्होंने उत्तराखण्ड के अनेक पर्वत व वनों में स्थित धार्मिक स्थानों पर जाकर योगियों की खोज की। वहां उन्हें यदि कोई विद्वान मिला तो उससे वार्तालाप कर विद्या प्राप्त करने का प्रयत्न किया। इसी क्रम में उन्हें अपने एक् योग गुरु से मथुरा के संस्कृत व्याकरण के आचार्य व व्याकरण के सूर्य स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी का पता मिला। सन् 1860 में स्वामी दयानन्द ने मथुरा में गुरुचरणों में पहुंच कर उनसे विद्यादान देने की प्रार्थना की। इसके बाद लगभग तीन वर्ष उनके सान्निध्य में रहकर अष्टाध्यायी-महाभाष्य एवं निरुक्त आदि व्याकरण ग्रन्थों सहित अनेक ग्रन्थों व शास्त्रों का अध्ययन करते हुए उन पर अधिकार कर लिया। उन्होंने अपनी योग्यता को इतना बढ़ाया कि वह धाराप्रवाह सरल संस्कृत में भाषण करने में समर्थ होने के साथ किसी भी शास्त्रीय विषय पर प्रभावशाली उपदेश कर सकते थे। सन् 1863 में गुरु विरजानन्द सरस्वती जी से दीक्षा लेकर उनके परामर्श के अनुसार उन्होंने संसार से अविद्या दूर करने का निश्चय किया और इस कार्य को सफल करने में प्राणपण से समर्पित हो गये।

14 वर्ष की आयु में शिवरात्रि के दिन जिस बोध व ज्ञान का प्रकाश स्वामी दयानन्द जी की आत्मा में हुआ था वह कालान्तर में पल्लवित, पुष्पित व विकसित होकर विस्तार के शिखर पर पहुंचा जहां उन्हें संसार विषयक सभी प्रकार के सद्ज्ञान की प्राप्ति हुई। मनुष्य को जीवन में जितनी भी शंकायें हो सकती हैं, उन सबका समाधान ऋषि दयानन्द को प्राप्त हुआ। वह न केवल समस्त शास्त्रों के ज्ञान से आलोकित हुए अपितु ईश्वरीय ज्ञान वेदों को भी सम्पूर्णता के साथ उन्होंने आत्मसात किया और उसका प्रकाश दिग्दिगन्त व विश्व भर में फैलाया। उन्होंने घोषणा की कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने के कारण संसार के सभी मानवरचित ग्रन्थ तुच्छ व एकांगी हैं। कोई भी मानव निर्मित ग्रन्थ वेदों से समानता नहीं रख सकता। सभी ग्रन्थों की वही मान्यतायें स्वीकार व आचरणीय हो सकती हैं जो वेदानुकूल हों। वेदविरुद्ध मान्यताओं का प्रमाण नहीं होता। महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जाना और समाधि अवस्था में उसका साक्षात् किया। हम विचार कर यह भी अनुमान करते हैं कि यदि ऋषि दयानन्द को ईश्वर का साक्षात्कार न होता तो वह वेद प्रचार का कार्य कदापि आरम्भ न करते। उन्होंने एक स्थान पर कहा भी है कि जीवन में उन्हें जो प्राप्त करना था वह प्राप्त हो चुका था। उन्होंने अपने प्राणों का उत्सर्जन इस लिए नहीं किया क्योंकि उनकी विद्या प्राप्ति की इच्छा तब अधूरी थी जो गुरु विरजानन्द जी के सान्निध्य में रहकर पूरी हुई। उन्होंने संसार का कल्याण करने के लिए ही आर्यसमाज की स्थापना सहित कालजयी अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि अनेक ग्रन्थों की रचना की। उनके समय में न वेद उपलब्ध थे और न सत्य वेदार्थ। उन्होंने पुरुषार्थ कर वेद मन्त्र संहिताओं को प्राप्त करने सहित उनके सत्य वेदार्थ को जाना व उसका भाष्य कर सबके लाभार्थ प्रकाशन किया। उनका वेदप्रचार कार्य, मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलित ज्योतिष आदि मिथ्या विश्वासों का खण्डन आदि संसार के सभी मनुष्यों के हित के लिए था। वह अंहिसा के पुजारी होने के साथ वैदिक व वैदिक शास्त्रों में वर्णित अहिंसा के समर्थक थे। उनकी अहिंसा दुष्टाचार का दमन और सदाचार को सम्मानित करने वाली थी। उनका मानना था कि एक दुष्ट व्यक्ति को दण्डित करने से उसके द्वारा भविष्य में पीड़ित किये जाने वाले अनेकानेक व्यक्तियों को अन्याय व अत्याचार से बचाया जा सकता है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगेश्वर श्री कृष्ण, चाणक्य व सभी वैदिक ऋषियों के वह प्रशंसक थे। उन्होंने संसार से अविद्या व अज्ञान का नाश करने के लिए वेदों की शिक्षा व गुरुकुल प्रणाली को प्रवृत्त करने का सत्यार्थप्रकाश में समर्थन किया। वह देश की आजादी के भी मन्त्रदाता व उद्घोषक थे। सत्यार्थप्रकाश एवं आर्याभिविनय आदि ग्रन्थों में उनके स्वराज्य विषयक विचारों को देखा जा सकता है। मांसाहार व पशुहत्या के वह घोर विरोधी थे और ऐसा करना उनकी दृष्टि में अमानवीय होने से निन्दनीय था। गोरक्षा के समर्थन व गोहत्या के विरोध में उन्होंने पृथक से **‘गोकरुणानिधि’** नाम से एक प्रेरक पुस्तक लिखी है। हिन्दी की उन्नति के लिए भी उन्होंने सबसे अधिक सराहनीय एवं प्रशंसनीय कार्य किया। विधवाओं की स्थिति सुधारने के लिए उन्होंने बाल विवाह जैसी कुप्रथा का निषेध किया। समाज में विधवा विवाह का प्रचलन भी आर्यसमाज के अनुयायियों के द्वारा ही हुआ। स्वामी जी ने शिवरात्रि को हुए बोध व उसके बाद विद्या प्राप्ति के उनके प्रयत्नों में मिली सफलता के कारण अस्पर्शयता व छुआछूत का उन्होंने विरोध किया और दलितों की शिक्षा व समानता के अधिकारों का समर्थन किया। उन्होंने कहा है कि विद्या व ज्ञान से सर्वथा शून्य मनुष्य की संज्ञा ही शूद्र है जिसे द्विजों व विप्रों के यहां भोजन पकाने आदि का कार्य करने के विधान का उन्होंने समर्थन किया है। हमारे मित्रों ने बताया है कि पूर्व प्रधानमंत्री चैधरी चरणसिंह स्वामी दयानन्द के कट्टर अनुयायी थे। वह किसी दलित बन्धु को ही अपना रसोइयां रखते थे। दलितोद्धार के क्षेत्र में भी ऋषि दयानन्द के अनुयायियों ने उनकी प्रेरणा के अनुरूप उल्लेखनीय कार्य किया है। उन्हीं से प्रेरणा लेकर आर्यसमाज ने गुरुकुल व दयानन्द ऐंग्लो वैदिक स्कूलों की स्थापना कर देश से अज्ञान दूर करने का प्रयास किया। स्वामी दयानन्द ने अपने जीवन में विज्ञान को भी उचित महत्व दिया। यदि वह कुछ दिन और जीवित रहते तो देश में विज्ञान पर आधारित उद्योगों की स्थापना में भी अग्रणीय भूमिका निभाते। स्वामी दयानन्द पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने शुद्धि का समर्थन व प्रचार किया और स्वयं देहरादून में मोहम्मद उमर नाम के एक व्यक्ति व उसके परिवार को शुद्ध कर वैदिक धर्मी बनाया था। देश और विश्व कल्याण के इन सब कार्यों का श्रेय स्वामी दयानन्द को 12 फरवरी, 1839 की शिवरात्रि को हुए बोध का परिणाम कह सकते हैं। इस बोध का ही परिणाम है कि देश अज्ञान से काफी कुछ दूर होकर ज्ञान की ओर अग्रसर हुआ है। अभी धर्म के क्षेत्र में वेदों को उसकी महत्ता व गरिमा के अनुरूप उचित प्रतिष्ठा मिलना बाकी है। ऋषि दयानन्द की यदि अचानक मृत्यु न होती तो वह इस कार्य को पूरा करने का हर सम्भव प्रयत्न करते। इसी काम को करते हुए उन्होंने अपना बलिदान देकर अपने प्राणों का उत्सर्ग किया है। ऋषि को शिवरात्रि के दिन जो बोध हुआ था, उस पर बहुत कुछ कहा जा सकता है। लेख की सीमा को ध्यान में रखकर हम इसे विराम देते हैं। आगामी ऋषि बोध दिवस पर हम उन्हें श्रद्धांजलि देते हैं।

इस लेख को लिखते हुए अब से लगभग 15 मिनट पूर्व रात्रि 10.32 बजे भूकम्प का हमें तेज झटका लगा। इससे हमें 10 मिनट के लिए विराम लेना पड़ा। हम पुनः लेख के समापन में जुट गये। ईश्वर की कृपा से यह पूरा हो गया है। ओ३म्् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**